अक्तूबर २०१५

कीमत ₹ १२/-

दादा भगवान परिवार का

अक्रम एक्सप्रेस

आराधना विराधना

आराधना-विराधना

संपादकीय

बालमित्रों,

आपको आराधना-विराधना शब्द बहुत बड़ा और मुश्किल लग रहा होगा, ठीक है न? लेकिन यदि सरल भाषा में बात करें तो, किसी के गुणगान गाना "आराधना" कहलाता है और जिस व्यक्ति की आराधना करते हैं उसके बारे में ही खराब बोलना "विराधना" कहलाता है। हर एक व्यक्ति में भगवान बैठे हैं इसलिए किसी की भी विराधना करना बहुत बड़ा जोखिम है।

इस अंक में परम पूज्य दादाश्री ने आराधना-विराधना के परिणामों का सुंदर वर्णन किया है। तो आओ, हम भी इन परिणामों को समझें और अभी तक की गई विराधनाओं को धोकर आराधना की ओर बढ़ें, और निश्चय करें कि आराधना नहीं कर पाएँ तो कोई बात नहीं, लेकिन विराधना तो करनी ही नहीं है।

- डिम्पल मेहता

संपादक:
डिम्पल मेहता
वर्ष : ३ अंक: ७
अखंड क्रमांक: ३१
अक्तूबर २०१५

संपर्क सूत्र
बालविज्ञान विभाग
त्रिमंदिर संकुल, सीमंधर सिटी,
अहमदाबाद - कलोल हाइवे,
मु.पो. - अडालज,
जिला . गांधीनगर - ३८२४२१, गुजरात
फोन : (०७९) ३९८३०१००
email:akramexpress@dadabhagwan.org
Website: kids.dadabhagwan.org

Printed & Published by

Dimple Mehta on behalf of
Mahavideh Foundation
Simandhar City, Adalaj-382421.
Dist-Gandhinagar.

Owned by
Mahavideh Foundation
Simandhar City, Adalaj-382421.
Dist-Gandhinagar.

Printed at
Amba Offset
Basement, Parshvanath
Chambers, Nr.RBI,
Usmanpura, Ahmedabad-14.

Published at
Mahavideh Foundation
Simandhar City, Adalaj-382421.
Dist-Gandhinagar.

अक्रम एक्सप्रेस

वार्षिक सदस्यता(हिन्दी)
भारत :१२५ रुपये
यू.एस.ए. :१५ डॉलर
यू.के. :१० पाउन्ड
पाँच वर्ष
भारत : ५०० रुपये
यू.एस.ए. : ६० डॉलर
यू.के. : ४० पाउन्ड
D.D/ M.O 'महाविदेह फाउन्डेशन' के नाम पर भेजें।

दादाजी कहते हैं...

"यदि ज्ञान की विराधना हुई हो तो वह परमात्मा की विराधना ही समझी जाएगी!"

आराधना यानी ऊपर चढ़ना। जिस काम को करने से हम ऊपर चढ़ सकते हैं उसे आराधना कहते हैं। यानी जो जीव ऊपर चढ़ चुके हों, हम से दो डिग्री ऊपर हों, उनका गुणगान करना, उनकी भक्ति करना और उनकी सेवा करना आराधना कहलाती है। ऐसा करने से हम भी ऊपर चढ़ पाएँगे लेकिन उन्हीं की बुराई करना, निंदा करना विराधना कहलाती है।

एक घंटे की विराधना हजारों जन्म बिगाड़ सकती है, ऐसा है। इससे तो बस दुःख ही उत्पन्न होते हैं। इसलिए आराधना नहीं कर पाएँ तो कोई बात नहीं, लेकिन विराधना न हो जाए इसका ध्यान रखना चाहिए। साधु, संन्यासी, साध्वी जी, मंदिर में, जिनालय में, देवों की, किसी की भी विराधना नहीं करनी चाहिए।

सचमुच में भगवान ने विराधना किसे कहा है? "ज्ञान" की विराधना को। ज्ञान ही आत्मा है! इसलिए यदि ज्ञान की विराधना हुई हो तो वह परमात्मा की विराधना ही समझी जाएगी!

ज्ञानीपुरुष, गुरु या किसी अन्य के लिए पूज्यभाव हो, और फिर उनसे कभी भूल - चूक हो जाए तो उनका बुरा देखकर विराधना कर देते हैं। यदि गुरु बनाने के बाद विराधना करनी हो, तो गुरु मत बनाओ। नहीं तो भयंकर दोष होगा। यदि गुरु की गलती देखी तो समझो कि तुम मारे गए।

धार्मिक पुस्तक की अशातना

विराधना और अशातना पास-पास के ही शब्द हैं। धार्मिक पुस्तक को यों ही कहीं डाल दें या फेंक दें, वह अशातना कहलाती है। इससे ज्ञान पर आवरण आता है और कई तरह के कर्म बंध जाते हैं। इसलिए पुस्तक की अशातना करना ज्ञानी की अशातना करने के बराबर ही है।

किसी भी जीव की किंचित्मात्र भी विराधना नहीं करने से मोक्ष मिलता है और यदि विराधना हो जाए तो प्रतिक्रमण करना चाहिए। प्रतिक्रमण करके इस गलती को धो देना चाहिए। जो माफी माँग लेता है वह इस दुनिया से छूट जाता है।

यह तो नई ही बात!

आराधना किसे कहते हैं? जिसकी आराधना की हो, उसकी कभी भी विराधना न करें, भले ही चाहे जीवन-मरण का प्रश्न हो! उसी को आराधना कहते हैं।

किसी भी जीव को किंचित्‌मात्र भी दुःख हो, ऐसी विराधना बंद हो जाए, वह आराधना कहलाती है। कोई गा रहा हो और हम उसका मज़ाक उड़ाएँ, इसे विराधना कहेंगे.. विराधना करने से अपना खुद का राग बिगड़ जाएगा और यदि तुम उसकी आराधना करोगे यानी उसका गुणगान करोगे कि "बहुत अच्छा गाया" कहोगे, तो यदि तुम्हें गाना नहीं भी आता होगा तो भी आ जाएगा क्योंकि हम जिसकी आराधना करते हैं उसके जैसे बन जाते हैं।

ज्ञान की विराधना करने से बुद्धि पर आवरण
आ जाता है और वह मूर्ख जैसा बन जाता है।

धर्म की विराधना करने से तो बहुत दुःख मिलता है। धर्म की विराधना यानी क्या, किसी भी जीव को किंचित्मात्र दुःख हो ऐसा भाव करना, इसे धर्म की विराधना कहते हैं। इससे तो बस दुःख ही पैदा होंगे। जब हमें हमेशा ऐसा भाव रहे कि हम से किसी को किंचित्मात्र भी दुःख न हो, इसे ही "धर्म किया" कहा जाएगा।

विराधना का परिणाम

पद्मपुर नगर में अजीतसेन नामक राजा राज्य करता था। उसका वरदत्त नामक कुँवर था। कुँवर रंग-रूप से बहुत सुंदर था, लेकिन वह अक्ल से एकदम खाली था। बड़े-बड़े पंडित उसे पढ़ाने आए लेकिन वह नहीं पढ़ पाया।

कुँवर वरदत्त की वाणी इतनी कठोर थी कि किसी को सुनना भी अच्छा नहीं लगता था। उसका संगीत परेशान कर देता था। कई बार राजा को चिंता होती थी कि "यह कुँवर कैसे राजपाट चलाएगा? मैं इतना चतुर और मेरा पुत्र इतना गँवार!"

ऐसे में कुँवर वरदत्त के पूरे शरीर में कोढ़ निकल आया।

उसी गाँव में सिंहदास नामक बहुत धनवान सेठ रहते थे, जिसकी गुणसुंदरी नामक पुत्री थी। गुणसुंदरी बहुत ही रूपवान थी लेकिन जन्म से ही गूंगी-बहरी थी। युवावस्था आते ही गुणसुंदरी के शरीर में भी कोढ़ निकल आया। किसी भी उपचार और दवाई का असर नहीं हो रहा था। सेठ के दुःख का पार नहीं था।

एक बार उस नगर में एक ज्ञानी आचार्य भगवंत पधारे। राजा अजीतसेन और सिंहदास दोनों उनके दर्शन के लिए गए। स्वागत करने के बाद दोनों ने अपने-अपने पुत्र-पुत्री की तकलीफ बताई और पूछा, "हे प्रभु, हमारे ऊपर ऐसा दुःख का पहाड़ कैसे टूट पड़ा? इसका क्या कारण है?"

आचार्य बोलें, "इस कारण को विस्तार से समझने के लिए एक कथा सुनिए...

खेटपुर नगर में सेठ जिनदेव और उनकी पत्नी सुंदरी अपने पाँच पुत्र और चार पुत्रियों के साथ रहते थे। सेठ ने पाँचों पुत्रों को पढ़ने के लिए अध्यापक के पास भेज दिया। लेकिन पाँचों पुत्र आलसी और अविनयी थे। पढ़ने में भी उन्हें कोई रुचि नहीं थी। वे आपस में गप्पें मारने में ही अपना समय निकाल देते थे।

अध्यापक को लगा कि ये लड़के दंड दिए बिना पढ़नेवाले नहीं हैं इसलिए उन्होंने लकड़ी से उन्हें मारा। लड़के रोते-रोते घर पहुँचे। उन्होंने अपनी माता को लकड़ी से शरीर पर पड़े हुए घावों को दिखाया।

"ये क्या?" सुंदरी घावों को देखकर ज़ोर से चिल्लाई।

"अध्यापक ने हमें लकड़ी से मारा है।" लड़के बोले।

यह देखकर बुद्धिहीन सुंदरी तुरंत बोली, "तुम्हें पढ़ने की कोई ज़रूरत नहीं है। इस दुनिया में उसी का बोलबाला होता है, जिसके पास संपत्ति होती है। पैसेवाला भले ही महामूर्ख हो, लेकिन निर्धन पंडित उसके सामने छोटा बन जाता है। इसलिए जिसके पास लक्ष्मी है वही सभी गुणों का भंडार हैं। इसलिए हे पुत्रों! अब आपको पढ़ने नहीं जाना है। यदि आपके अध्यापक आपको बुलाने आएँ तो उन्हें दूर से ही पत्थर मारना।"

ऐसा सिखाने के बाद सुंदरी ने उनका बस्ता, पुस्तक आदि सबकुछ अग्नि में डालकर जला दिया।

इस तरह पिछले जन्म में बेटों के प्रति राग ने उसे ज्ञान के प्रति द्वेष करवाया। और उस ज्ञानद्वेष के कारण ज्ञान और ज्ञान के साधनों को आग में डालने की वजह से उसने भयंकर ज्ञानावर्णीय कर्म बाँध लिया।

जब सेठ जिनदेव को इस हकीकत का पता चला, तब उन्होंने सुंदरी को बहुत डाँटा लेकिन सुंदरी ने जिनदेव को भी सुना दिया कि, "तुम खुद भी तो पंडित ही हो न? तुमने दुनिया की कौन सी दरिद्रता दूर की है? वैसे सुख तो पुण्य से ही मिलता है, न कि पढ़ने-पढ़ाने के जंजाल से।"

जिनदेव उस समय तो चुप हो गए, लेकिन जब पुत्र बड़े हुए तब उन्होंने सुंदरी से कहा, "तुमने पुत्रों को अनपढ़ रखकर उनका जीवन बरबाद कर दिया इसलिए उन्हें कन्या देने के लिए कोई तैयार नहीं हो रहा।"

"इसमें मेरी कोई गलती नहीं है। सारा दोष तुम्हारा ही है क्योंकि पुत्र पिता के जैसे होते हैं और पुत्रियाँ माता के जैसी होती हैं।"

सुंदरी के इस जवाब से सेठ जिनदेव को बहुत गुस्सा आ गया। "पापिनी! तू मेरे सामने बोलती है? ऐसा कहकर उन्होंने पास में पड़ा हुआ पत्थर उठाकर सुंदरी को मारा। सिर में चोट लगने से उसकी

तुरंत ही मृत्यु हो गई। सेठ जी, इस तरह से मरकर, वह तुम्हारी पुत्री गुणसुंदरी बनकर आई है।"

कथा समाप्त होने के बाद आचार्य बोले, "सेठ जी, पिछले जन्म में, विद्या की, पुस्तकों की और पंडित की भयंकर विराधना करने के फल-स्वरूप आपकी पुत्री इस जन्म में गूँगेपन और अन्य रोगों से पीड़ित हैं।"

यह सुनकर, अजीतसेन राजा ने गुरु महाराज से पूछा, "हे गुरुदेव! मेरा पुत्र वरदत्त एक अक्षर भी पढ़ नहीं सकता और साथ ही कोढ़ के रोग से पीड़ित है उसका क्या कारण है, कृपा करके बताइए।"

"हे राजन! आपके पुत्र की ऐसी दशा कैसे हुई उसे जानने के लिए उसके पूर्वजन्म के बारे में सुनिए," गुरु महाराज बोले।

"वसुसार और वसुदेव नामक दो भाई थे। एक मुनि का धर्म उपदेश सुनकर दोनों को वैराग्य आ गया और वे दोनों साधु बन गए।"

साधु बनने के बाद वसुदेव ने विद्या के लिए अपना सबकुछ समर्पित कर दिया। वे स्वाध्याय करते और सिद्धांत पढ़ते। गुरुदेव ने वसुदेव को योग्य समझकर उन्हें आचार्य की पदवी दे दी।

वसुदेव आचार्य रोज़ पाँच-सौ साधुओं को उपदेश देते थे। एक दिन की बात है। वसुदेव की सेहत थोड़ी नरम थी। वे दोपहर को विश्राम कर रहे थे, उस समय एक साधु "आगम" का अर्थ पूछने के लिए आए। आचार्य ने उठकर अर्थ बताया और फिर वापस विश्राम करने लगे।

तभी दूसरा साधु अर्थ पूछने आ गया। आचार्य वापस बैठे और अर्थ बताने लगे। इसी तरह एक आए और दूसरा जाए। आचार्य विश्राम नहीं कर पाए। उन्हें तेज बुखार आ गया। आचार्य ने सोचा, "अरे, जानकार को ही इस दुनिया में दुःख है। देखो न! यह मेरा भाई वसुसार, कितने आराम से सो रहा है, न कोई चिंता, न परेशानी! आज से मैं भी निश्चय करता हूँ कि "जिन्हें पढ़ना हो वे पढ़ें और नहीं पढ़ना हो तो वे जाएँ भाड़ में!"

हम तो आराम से खा-पीकर मज़ें करेंगे। आज से नए पाठ के बारे में सोचना भी नहीं और समझाना भी नहीं है। मौन धारण

कर लेता हूँ, इससे सारी मुश्किलें हल हो जाएगी।"

आचार्य वसुदेव बारह दिनों तक मौन रहे। एक दिन अचानक उन्हें दर्द हुआ और उनकी मृत्यु हो गई।

बात पूरी करते हुए आचार्य बोले, "हे राजन, उन विद्वान आचार्य का, देवदत्त के रूप में आपके यहाँ जन्म हुआ हैं। मन से उन्होंने ज्ञान के लिए बुरा सोचा, ज्ञान की विराधना की और इसीलिए इस जन्म में उन्हें ज्ञान का एक अक्षर भी पचता नहीं है।"

"यदि वे दिल से प्रतिक्रमण करेंगे और ज्ञान की आराधना करेंगे तो इस गुनाह से छुटकारा पा सकेंगे"

"प्रभु, इस विराधना के फल से छूटने का कोई उपाय है? अजीतसेन और सिंहदास सेठ ने नम्रता से पूछा।"

"यदि वे दिल से प्रतिक्रमण करेंगे और ज्ञान की आराधना करेंगे तो इस गुनाह से छुटकारा पा सकेंगे", आचार्य ने उपाय बताया।

कुँवर वरदत्त और गुणसुंदरी वहाँ उपस्थित थे। गुरुदेव के कहे अनुसार उन्होंने दिल से प्रतिक्रमण करके, ज्ञान की आराधना करने का निश्चय किया। पूरी ज़िंदगी तप किए और उत्साहपूर्वक स्वाध्याय किया।

जैसे विराधना नीचे गिराती है वैसे ही आराधना ऊपर चढ़ाती है। पूरी ज़िंदगी दिल से और उत्साह से आराधना करने के फल-स्वरूप मृत्यु के बाद दोनों का देवलोक में जन्म हुआ।

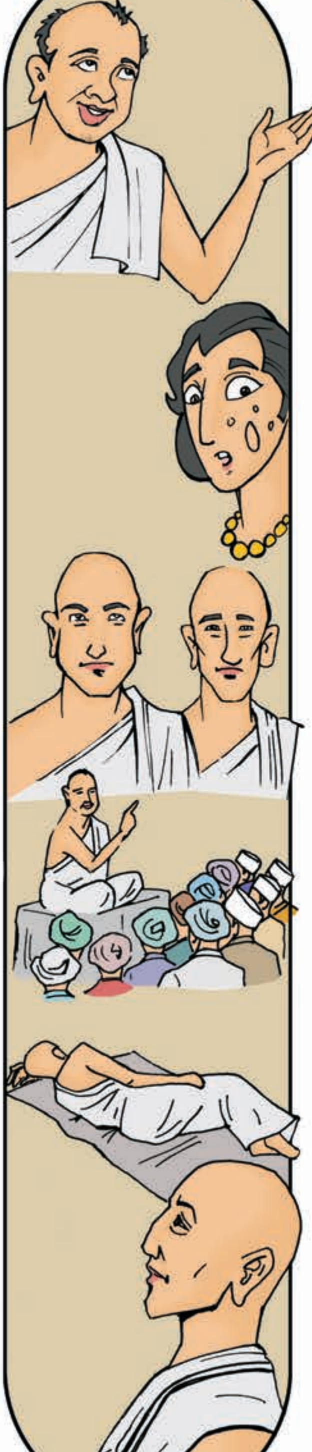

अटल श्रद्धा

देवलोक में राजा श्रेणिक की जिन देव, जिन साधु-साध्वी और जिन धर्म के प्रति असाधारण श्रद्धा की बहुत प्रशंसा होती थी।
यह सुनकर एक बार,
श्रेणिक की इतनी ज्यादा प्रशंसा क्यों है? चलो, आज मैं भी देखता हूँ कि श्रेणिक की श्रद्धा कितनी अडिग है!
महाराज, उन मुनि को देखो। उनकी वेशभूषा जैन साधु की तरह दिखती है।
लेकिन उनके एक हाथ में मछली पकड़ने की जाल है और दूसरा हाथ माँस खाने के लिए तैयार हो इस तरह खून से सना हुआ है।

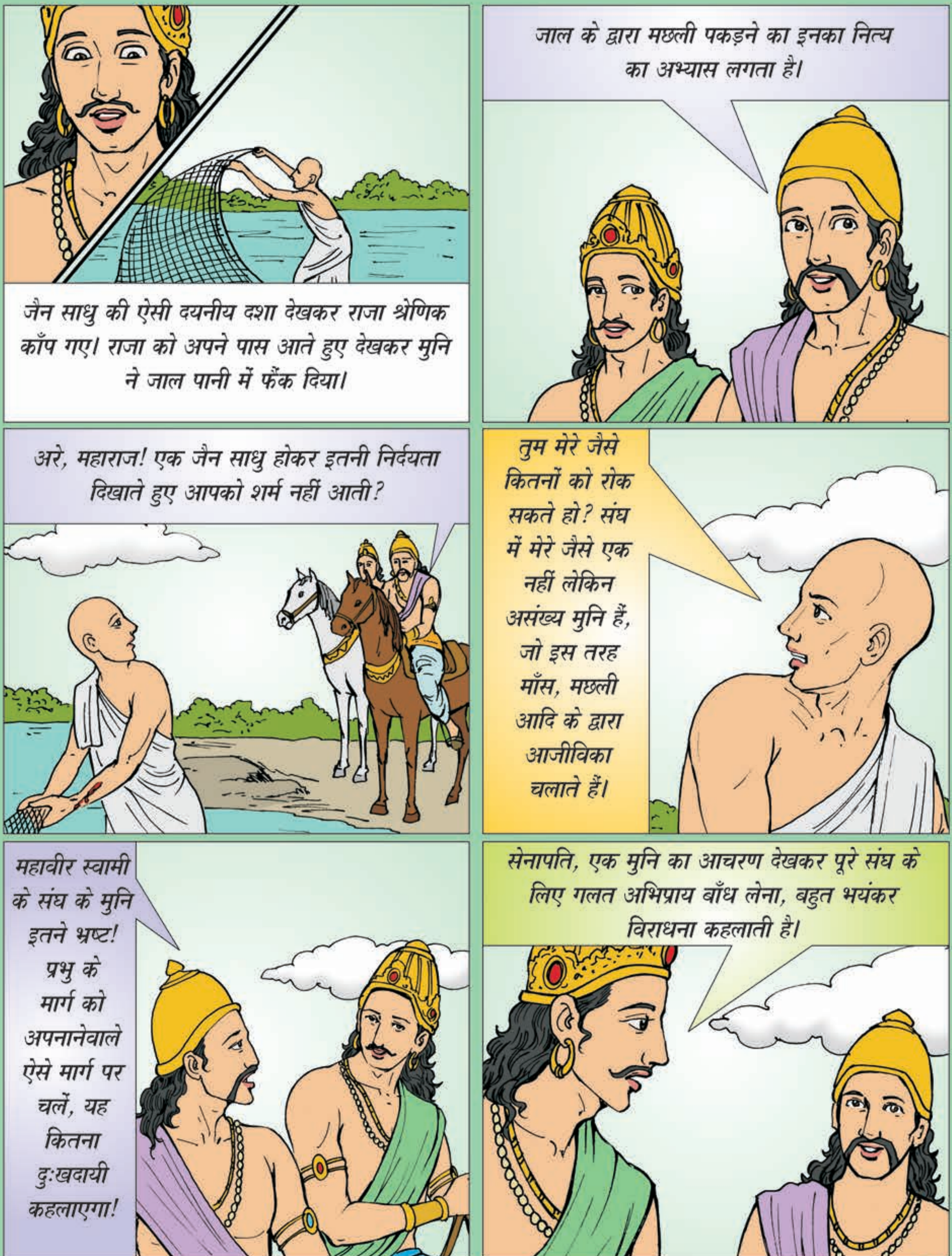
जैन साधु की ऐसी दयनीय दशा देखकर राजा श्रेणिक काँप गए। राजा को अपने पास आते हुए देखकर मुनि ने जाल पानी में फेंक दिया।
जाल के द्वारा मछली पकड़ने का इनका नित्य का अभ्यास लगता है।
अरे, महाराज! एक जैन साधु होकर इतनी निर्दयता दिखाते हुए आपको शर्म नहीं आती?
तुम मेरे जैसे कितनों को रोक सकते हो? संघ में मेरे जैसे एक नहीं लेकिन असंख्य मुनि हैं, जो इस तरह माँस, मछली आदि के द्वारा आजीविका चलाते हैं।
महावीर स्वामी के संघ के मुनि इतने भ्रष्ट! प्रभु के मार्ग को अपनानेवाले ऐसे मार्ग पर चलें, यह कितना दुःखदायी कहलाएगा!
सेनापति, एक मुनि का आचरण देखकर पूरे संघ के लिए गलत अभिप्राय बाँध लेना, बहुत भयंकर विराधना कहलाती है।

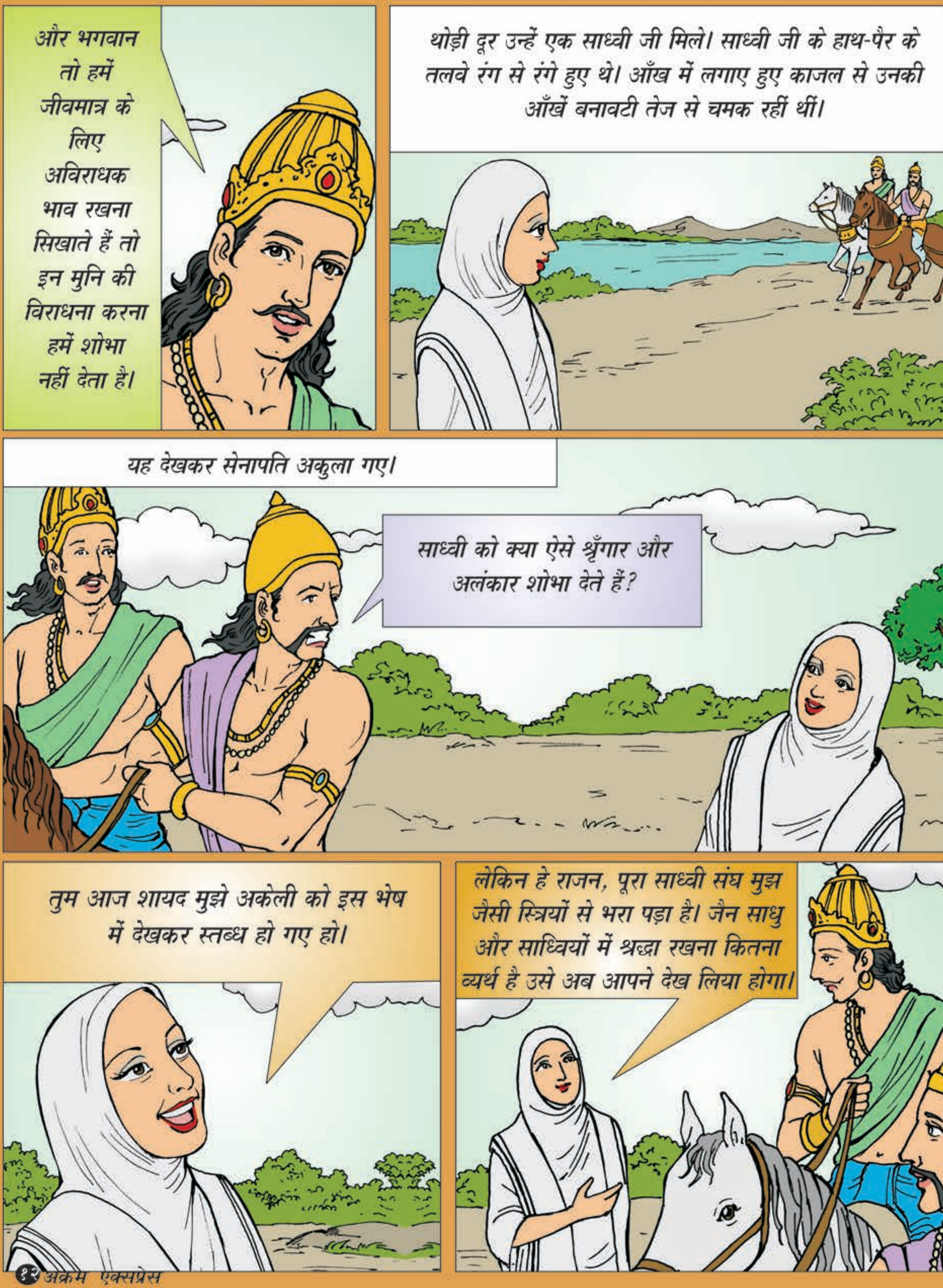
और भगवान तो हमें जीवमात्र के लिए अविराधक भाव रखना सिखाते हैं तो इन मुनि की विराधना करना हमें शोभा नहीं देता है।
थोड़ी दूर उन्हें एक साध्वी जी मिले। साध्वी जी के हाथ-पैर के तलवे रंग से रंगे हुए थे। आँख में लगाए हुए काजल से उनकी आँखें बनावटी तेज से चमक रहीं थीं।
यह देखकर सेनापति अकुला गए।
साध्वी को क्या ऐसे श्रृँगार और अलंकार शोभा देते हैं?
तुम आज शायद मुझे अकेली को इस भेष में देखकर स्तब्ध हो गए हो।
लेकिन हे राजन, पूरा साध्वी संघ मुझ जैसी स्त्रियों से भरा पड़ा है। जैन साधु और साध्वियों में श्रद्धा रखना कितना व्यर्थ है उसे अब आपने देख लिया होगा।

श्रद्धा पर मुझे बिल्कुल भी शंका नहीं है। महावीर प्रभु का साधु-साध्वी का संघ भ्रष्ट नहीं हो सकता। मैं अभी भी मानता हूँ कि जैन साधु-साध्वी का संघ पवित्र ही है।
जिस धर्म की आराधना से मैं ऊपर चढ़ा हूँ, उसकी विराधना कभी नहीं करूँगा!
अंत में श्रेणिक राजा की परीक्षा लेने के लिए आए दुर्दुरांक देव राजा के पैरों में गिर गए।
महाराज, धन्य है आपकी अटल निःशंक श्रद्धा!
इस तरह, विपरीत संयोगों में भी श्रेणिक राजा की श्रद्धा का दीपक नहीं बुझा। ऐसी अटल श्रद्धा रखनेवाले श्रेणिक राजा आनेवाली चौबीसी के पहले तीर्थंकर बनेंगे।

भक्त सूरदास

एक गरीब ब्राह्मण बड़ी मुश्किल से अपने परिवार का पालन-पोषण करता था। ऐसे में उनके घर चौथे बच्चे का जन्म हुआ और वह भी अंधा! ब्राह्मण को लगा, "यह मेरे क्या काम आएगा? यह मुझे क्या कमाकर देगा?" इसलिए पिता अपने पुत्र की उपेक्षा करने लगे। इस तरह बेटे को पिता का प्यार नहीं मिला, लेकिन माँ का भरपूर प्यार मिला। माँ उसे गोद में लेकर बैठतीं और धीरे-धीरे भजन गाना सिखातीं। बेटा पाँच-छह साल का हुआ, तब तक तो उसे बहुत से भजन कंठस्थ हो गए थे। उसका कंठ भी मधुर था।

जब बालक के घर के सामने से भजन मंडली निकलती, तब बालक माँ से कहता, "माँ, मुझे भी उनके साथ जाकर भगवान की भक्ति-आराधना करनी है!" यह सुनकर माँ की आँखों में आँसू आ जाते। बेटे को छाती से लगाकर कहतीं, "बेटा, तू आँख से देख नहीं सकता, वहाँ तुझे कौन सँभालेगा?" तब बेटा माँ से कहता, "माँ, भगवान तो मुझे सँभालेंगे न?"

वह बालक सूरदास थे। एक बार एक सेठ ने काम के बदले में सूरदास के पिता को दो स्वर्ण मुद्राएँ दी। पिता को चिंता हुई कि छोटे से घर में स्वर्ण मुद्राएँ कहाँ रखें? इसलिए उन्होंने उन मुद्राओं को एक कपड़े में बाँधकर तकिये के नीचे रख दिया। रात को, चूहे कपड़े को अपने बिल में ले गए। सुबह खोजबीन शुरू हो गई। सूरदास ने पिता से कहा, "मैं ढूँढ देता हूँ।" लेकिन साथ ही शर्त रखी कि "यदि मुद्राएँ मिल जाएँ तो आपको मुझे घर से मुक्त करना पड़ेगा।" पिता को तो हर्ज़ ही कहाँ था?

सूरदास ने मुद्राओंवाला कपड़ा ढूँढ दिया और उसी समय अपनी लकड़ी सँभाली और घर से निकल गए। माँ ने बेटे को रोकने की कोशिश की, "अरे बेटा, तू कहाँ जा रहा है"? तुझे कौन सँभालेगा? सूरदास ने कहा, "माँ, तुम क्यों चिंता करती हो? जो नाथ सब को सँभालता है वह मुझे भी सँभालेगा।"

सूरदास चलते-चलते एक गाँव में पहुँचे। वे गाँव के तालाब के किनारे बैठेकर सहजता से भजन गाने लगे। भजन सुनकर एक के बाद एक बहुत से लोग इकट्ठे होने लगे। गाँव के लोग सूरदास के भजन सुनकर बहुत खुश हुए और उसी गाँव में उनके रहने के लिए एक झोंपड़ी बना दी। अब वे पद रचना करने लगे एवं स्वयं रचित पदों को गाते भी थे।

उनके पदों में प्रभु के प्रति अपार आराधना छलकती थी। लोग भी उनके पद गाते और उनका प्रचार करते। ऐसा करते-करते सूरदास अठारह साल के हो गए। प्रभु के अनन्य भक्त की तरह उनकी प्रसिद्धि बढ़ने लगी।

लेकिन प्रसिद्धि में बंधना उन्हें अच्छा नहीं लगता था, इसलिए किसी को पता चले उससे पहले ही वे उस जगह को छोड़कर आगरा व मथुरा के मध्य स्थल यमुना नदी के किनारे गौघाट पर एकांत में रहने लगे।

इस घाट पर प्रतिदिन महाप्रभु जी वल्लभाचार्य आते थे। सूरदास के पद और भजन, सुनकर वे प्रसन्न हो जाते थे। एक दिन उन्होंने सूरदास को सलाह दी, "तुम अपने पद और भजनों में श्री कृष्ण की अद्भुत लीलाओं का वर्णन करो।"

सूरदास ने कहा, "महाप्रभु जी, मैंने जिनका अनुभव नहीं किया, उनका वर्णन कैसे करूँ?" महाप्रभु जी ने सूरदास को वह अनुभव करवाया। सूरदास ने कृष्णलीलाओं का वर्णन सुनकर जो पद रचे, वे भक्ति साहित्य में अमर हो गए। सूरदास की अनन्य भक्ति और आराधना से महाप्रभु जी बहुत खुश हुए और उन्हें दिल से आशीर्वाद दिया, "तुम्हारी अनन्य भक्ति के कारण दैवीय कृपा तुम पर बरस रही है। लाख तो क्या, सवा लाख पदों की तुम रचन करोगे!"

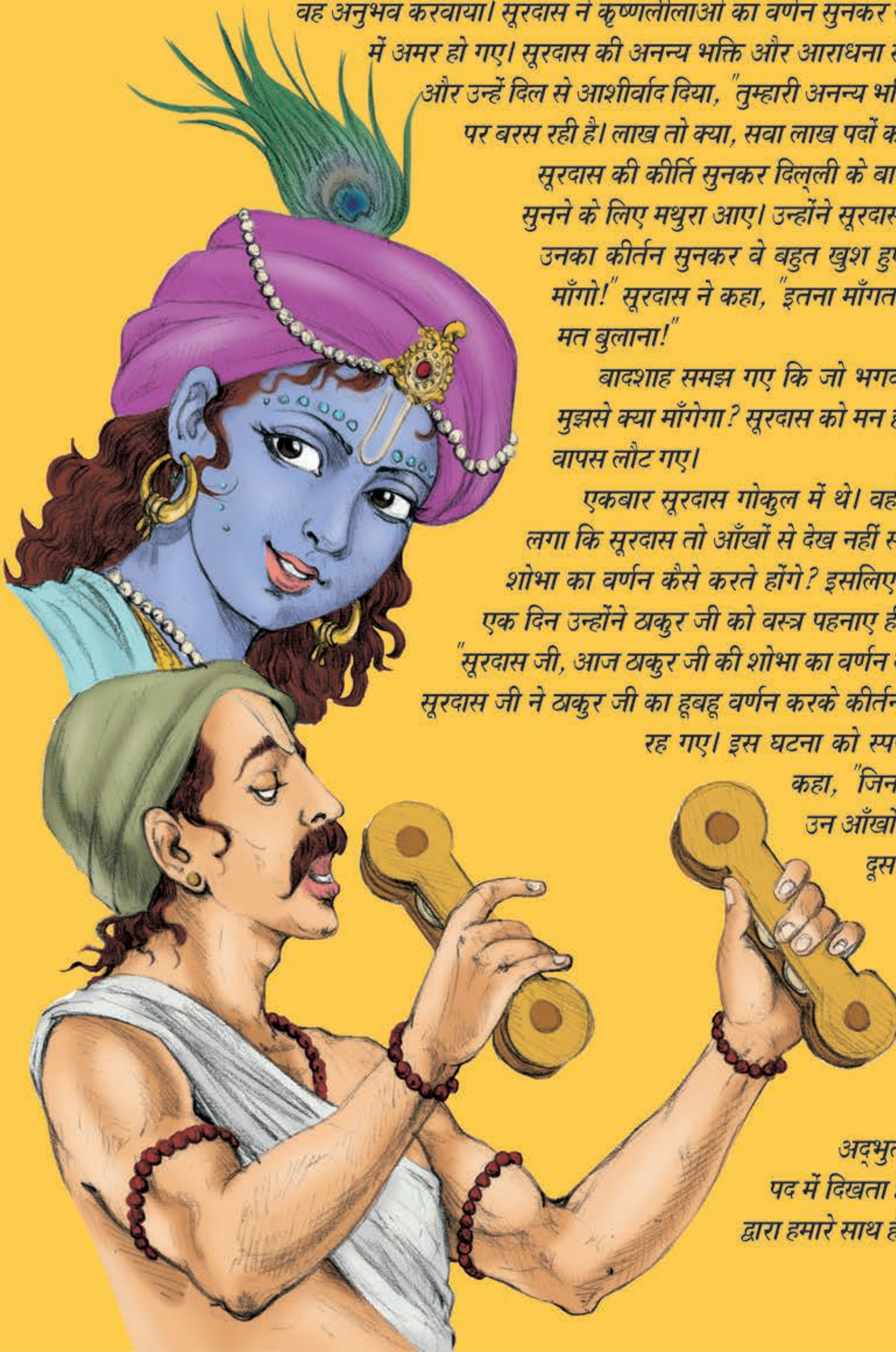

सूरदास की कीर्ति सुनकर दिल्ली के बादशाह अकबर उनका कीर्तन सुनने के लिए मथुरा आए। उन्होंने सूरदास को निमंत्रण देकर बुलाया। उनका कीर्तन सुनकर वे बहुत खुश हुए और कहा, "सूरदास, कुछ माँगो!" सूरदास ने कहा, "इतना माँगता हूँ कि आप मुझे फिर कभी मत बुलाना!"

बादशाह समझ गए कि जो भगवान से कुछ नहीं माँगता वह मुझसे क्या माँगेगा? सूरदास को मन ही मन प्रणाम करके बादशाह वापस लौट गए।

एकबार सूरदास गोकुल में थे। वहाँ कुछ गोस्वामी बालकों को लगा कि सूरदास तो आँखों से देख नहीं सकते, फिर भी ठाकुर जी की शोभा का वर्णन कैसे करते होंगे? इसलिए उनकी परीक्षा लेने के लिए एक दिन उन्होंने ठाकुर जी को वस्त्र पहनाए ही नहीं और सूरदास से कहा, "सूरदास जी, आज ठाकुर जी की शोभा का वर्णन कीजिए!" सूरदास जी ने ठाकुर जी का हूबहू वर्णन करके कीर्तन गाया। सुनकर सभी स्तब्ध रह गए। इस घटना को स्पष्ट करते हुए सूरदास जी ने कहा, "जिन आँखों में भगवान बसे हों उन आँखों को भगवान के सिवाय कोई दूसरा दिखता ही नहीं।"

जीवन के अंतिम पलों तक उन्होंने प्रभु कीर्तन रचे और गाए। इ.स. १५६३ में, ८० की उम्र में उन्होंने देह त्याग किया। प्रभु के प्रति उनकी अद्भुत आराधना का अर्क उनके पद में दिखता है। आज भी वे अपने पदों के द्वारा हमारे साथ ही हैं।

मीठी यादें

एक बार दादा दर्शन में बच्चों का शिविर था। वेकेशन का समय था, इसलिए एक ब्रह्मचारी बहन वहाँ वेकेशन के लिए गई थी। शिविर में बहुत काम होने के कारण वह सेवा में लग गई। बच्चों को जहाँ ठहराया गया था उस फ्लैट की सफाई करने वह गई।

फ्लैट किसी धनी व्यक्ति का था। उनसे कहा गया कि सफाई करते समय चीज़ें योग्य स्थान पर रखना, बेकार चीज़ें डस्टबिन में डाल देना और यदि तुम्हें ज़रूरत हो तो ले जाना। बाकी की अन्य चीज़ें संभालकर रख देना।

फ्लैट में से नोट-बुक्स और पेन मिले जो उन बहन ने ले लिए कि उन्हें ऑफिस में लिखने के काम आएँगे। फिर साफ करते-करते एक कोने में चाँदी का सिक्का मिला। उसे देखकर उन बहन को लगा, इतने बड़े लोगों के लिए इसकी कोई कीमत नहीं होगी, तो इसे ले लूँ। यह तो यों ही पड़ा है। ऐसा सोचकर उन्होंने उसे ले लिया। घर साफ करके घर के मालिक को चाबी देकर वह चली गई।

उन भाई की पत्नी दादा के विरुद्ध थी, ऐसा सब ले जाने के बारे में जब उन्हें पता चला तब अपने पति को बताए बिना अपनी बेटी को लेकर वह दादा दर्शन में आई और नीरू माँ पर ज़ोर-ज़ोर से आक्षेप लगाने लगीं, "तुम्हारे लोग हमारे घर से पूछे बिना चीज़ें ले गए, उनकी हमें ज़रूरत थी।" नीरू माँ को इस बारे में कुछ पता नहीं था लेकिन वह बहन इतने गुस्से में थी कि बिना कुछ कहे चुपचाप सब सुन लिया।

उन माँ-बेटी के जाने के बाद, वह बहन, जो सबकुछ ले आई थीं, उनसे रहा नहीं गया। वे नीरू माँ से कुछ कह नहीं पाई। आखिर दो-तीन दिन बाद सहन नहीं होने पर उन्होंने वहाँ से लाई हुई सभी चीज़ें नीरू माँ को दिखाते हुए कहा, "हम ये स्टेथोस्कोप लाए हैं, ऑफिस में काम आए इसलिए बुक्स और पेन लाए हैं।"

आखिर में वो चाँदी का सिक्का नीरू माँ के हाथ में देते हुए कहा, "यह तो मैं ही लाई हूँ। अब मैं इसका क्या करूँ?"

नीरू माँ ने बहुत ही शांति से कहा, "यह चोरी कहलाती है।"

उन बहन ने दलील दी, "मैं तो पूछकर लाई हूँ। सभी ने कहा इसलिए मैंने ले लिया। यह तो कचरे में पड़ा हुआ था।"

नीरू माँ ने समझाते हुए कहा, "नहीं, लेकिन इसके मालिक को दुःख तो हुआ न! दुःख हुआ इसका मतलब उनकी इच्छा नहीं थी। उनसे पूछे बिना हमने लिया इसे चोरी कहते हैं।"

बहन थोड़ी शांत हुई। उन्होंने नीरू माँ से पूछा, "अब मैं इसका क्या करूँ?"

नीरू माँ ने कहा, "इसे तुम किसी मंदिर में रख देना और अब फिर से ऐसा नहीं हो उसका निश्चय करना। कभी भी किसी से पूछे बिना नहीं लेना चाहिए। इस चीज़ की हमें क्या ज़रूरत है? आगे से ध्यान रखना और पंद्रह दिन तक इसका प्रतिक्रमण करना।"

पूरी घटनाक्रम में उन बहन को यह टच कर गया कि इतनी बड़ी गलती हुई फिर भी नीरू माँ और दीपक भाई कुछ बोले नहीं जैसे कि कुछ हुआ ही नहीं हो इस तरह हमें समझाकर प्रेम से वापस मोड़ लिया। उन्होंने चुपचाप आरोपों को अपने ऊपर ले लिया।

यह सब देखकर उन बहन का पश्चाताप अनेक गुना बढ़ गया। नीरू माँ के कहे अनुसार उसने पंद्रह दिन तक हार्टिली प्रतिक्रमण किया और निश्चय किया कि आगे से किसी से पूछे बिना कभी कुछ लेना ही नहीं है।

और उस दिन से उससे कोई भी गलती हो जाए तो उसे नीरू माँ से कह देने की हिम्मत आ गई।

ऐसे हैं अपने नीरू माँ!!! ज्यादा क्या कहें? बस, हम भी उन्हें देखकर सीखें और उनके जैसे बनें।

जीवंत उदाहरण

दादाश्री कहते हैं कि : रावण पूज्य है। रावण खास पूजा करने योग्य है। उनके यहाँ पर, इस हिन्दुस्तान में, लोगों ने पुतले जलाए! बड़ा सा पुतला बनाकर भयंकर ढंग से जलाते हैं न! ऐसे रावण को हिन्दुस्तान के लोगों ने बदनाम किया। राम का नाम अच्छा दिखाने के लिए उन्हें बदनाम किया। यदि हम अपने शास्त्रों में देखेंगे तो पता चलेगा कि उनका स्थान क्या है? वे त्रेंसठ श्लाका पुरुषों में आते हैं। जिन्हें चौबीस तीर्थंकरों ने एक्सेप्ट किया है वे ऐसे श्लाका पुरुषों में से एक हैं। श्लाका पुरुषों का मतलब है, जिनके लिए भगवान ने मुहर लगाई कि वे भगवान होने के लायक हैं। भविष्य में अरिहंत होनेवाले हैं। उनके लिए बुरा बोलकर जोखिम क्यों मोल लेते हो?

रावण के लिए तो ऐसा कहा जाता है कि

रावण हतो केवो शास्त्र वेत्ता (रावण थे कैसे शास्त्र वेत्ता)

नवे ग्रहो अेनी निकटमां रहेता (नौ ग्रह उनके निकट रहते)

रावण में एक अहंकार की ही कमज़ोरी थी। बाकी सब तरह से पूजने योग्य थे। सीता माँ को उन्होंने कभी भी खराब दृष्टि से नहीं देखा, ना ही कभी छुआ। ऐसे रावण का हिन्दुस्तान के लोग पुतला बनाकर जलाते हैं और किसी से पूछते भी नहीं है। फिर विद्या तो चली ही जाएगी न!

और अंत में...

बाहरगाँव सत्संग के दौरान पूज्य श्री एक महात्मा के यहाँ रुके थे। उनका घर एकदम स्वच्छ देखकर उनके साथ जो ब्रह्मचारी भाई थे, उन्हें आश्चर्य हुआ। उन्होंने उन महात्मा बहन को पूछा कि, "आप इस घर में रहते नहीं हो फिर भी आपका घर इतना साफ है जैसे रोज़ सफाई होती हो।"

महात्मा बहन ने जवाब दिया। मुझे ज्ञान लिए हुए दस साल हो गए, तभी से मेरा भाव था कि पूज्य श्री मेरे घर आएँ और रुकें।

इसलिए जैसे शबरी, इस आशा में रोज़ घर की सफाई करती थी कि आज भगवान राम मेरे घर आएँगे, वैसे ही मैं भी अंतिम दस साल से रोज़ शबरी की तरह पूज्य श्री की प्रतिक्षा करती थी कि एक दिन पूज्य श्री मेरे घर आएँगे और रुकेंगे। और इस आशा से मैं रोज़ घर की सफाई करती थी।

यह है ज्ञानी की आराधना!!!

Akram Express

October 2015
Year : 3, Issue : 7
Conti. Issue No.: 31

Date of Publication On 8th Of Every Month
RNI No.GUJHIN/2013/53111
Postal Reg. No. G- GNR-306/14-16
valid up To 31-12-2016
LPWP Licence No. CPMG/GJ/119/2014
valid up To 31-12-2016
Posted at Adalaj Post Office
on 08th of every month

जन्माष्टमी पर अडालज में पूज्य श्री के सानिध्य में श्री कृष्ण जन्मोत्सव मनाया गया

अमरावती में बच्चों द्वारा हर्षोल्लास से पूज्य श्री का स्वागत

अक्रम एक्सप्रेस के सदस्यों के लिए सूचना

१. आपकी वार्षिक सदस्यता समाप्त हो रही है उसका पता कैसे चलेगा? यदि आपकी इस महीने में आई हुई अक्रम एक्सप्रेस के कवर के लेबल पर लगे हुए मेम्बरशीप नं. के बाद # हो तो यह आपकी अंतिम अक्रम एक्सप्रेस है। उदा. AGIA4313# और यदि लेबल पर मेम्बरशीप नं. के बाद ## हो तो अगले महीने में आपकी सदस्यता समाप्त होगी। उदा. AGIA4313## अक्रम एक्सप्रेस रिन्यूअल की जानकारी संपादकीय पेज पर दी गई है।

२. यदि किसी महीने का अक्रम एक्सप्रेस आपको नहीं मिला हो तो नीचे दी गई माहिती फोन नं. ८९५५००७५०० पर SMS करें।

१. कच्ची पावती नंबर या ID No., २. पूरा ऐड्रेस पिन कोड के साथ, ३. जिस महीने का मैगज़ीन नहीं मिला हो, उस महीने का नाम।

Printer, Publisher and Owner - Dimple Mehta on behalf of Mahavideh Foundation, Editor - Dimple Mehta, Printing Press **Amba offset:-** Parshwanath Chembers, Usmanpura, Ahmedabad-14 and published at Mahavideh Foundation, Simandhar City, Adalaj-382421.Dist-Gandhinagar.